ISSN NO :2455-4219

तुलसी के 'मानस' का समाज दर्शन

सारांश : 'रामचरितमानस' तुलसीदास की अजस्र प्रतिभा का प्रमाण है। विभिन्न अव्यवस्थाओं के बावजूद भी उनकी इस रचना में रामराज्य का अखंड साम्राज्य खड़ा किया गया है। शील, शक्ति और विवेक से विभूषित राम कहीं निषादराज व भीलनी के आदर - सत्कार को स्वीकार करते हैं, तो कहीं अहिल्या का उद्धार कर अपने कर्तव्य प्रण में अडिग दिखाई देते हैं। राम वनगमन की चौदह वर्ष की तपस्या मानस का परिष्कार एवं संवर्धन करती है। सामंतवादी इस युग में समाज में जो वर्ग पैदा हो गए थे, उनका रूबरू चित्र मानस में देखने को मिलता है, जिसे देख रोंगटे खड़े हो जाते हैं। बावजूद इसके तुलसी विचलित नहीं हुए, डटे रहे विषमताओं के बीच अपनी लेखनी लेकर। समाज में त्याग, प्रेम, विनम्रता, धार्मिक सद्भाव, विश्वास व नैतिकता का एक नया सवेरा लाना चाहते थे, जिसका परिणाम है - रामचरितमानस। उनकी दृष्टि समरसता की थी जिसे वे उक्त अधोपतन समाज में भी कायम रखना चाहते थे। कालदर्शी तुलसीदास ने तत्कालीन समय की पापमयता के विरुद्ध अपनी विराट सोच का राम राज्य कल्पित किया ।
मूल शब्द : सामाजिक परिष्कार, समृद्धि, संस्कृति, अव्यवस्था, स्वेच्छाचार सार्वभौमिक।

प्रत्येक समाज का अपना एक जीवन दर्शन होता है, जिसके आधार पर वह चिंतन- मनन करता है और जीवन में आगे बढ़ता है। मनुष्य जन्म से लेकर मृत्यु तक जिस सुरक्षा चक्र के दायरे में रहना चाहता है उसी का नाम समाज है। पालन -पोषण से लेकर उसके विकास की सभी संभावनाएँ इसमें अंतर्निहित हैं। यह समाज ही है जो व्यक्ति के संबंधों, उसके कार्यों, अधिकारों व कर्त्तव्यों आदि को स्थापित करता है। यह सामाजिकता ही मानव को देव तुल्य बनाने के लिए सदैव प्रयासरत रही है। इसीलिए मनुष्य को एक सामाजिक प्राणी कहा गया है, जिसके अभाव के बिना उसका जीना अति दुष्कर है। डॉ. सीताराम झा 'श्याम' लिखते हैं-"सम्यक् अजन्ति -गच्छन्ति जना: अस्मिन इति समाज:।"1 अर्थात् जिसमें सभी लोग अच्छी तरह से रहें वह समाज है।

तुलसी के 'मानस' के समाज दर्शन का महत्व व्यापक है, क्योंकि यह काव्य भारतीय संस्कृति और समाज को गहराई से समझता है। यह उस समय की सामाजिक स्थिति, व्यक्ति की भावनाओं और धर्म के मूल्यों को दर्शाता है। उनके समाज दर्शन का प्रमुख आधार धर्म, प्रेम, समृद्धि और न्याय है। यह काव्य सामाजिक समृद्धि के मार्ग को प्रशस्त करता है और समाज में व्यक्ति की दया, श्रद्धा और सहयोग की अहमियत को स्थापित करता है।
प्रश्न यह उठता है कि क्या काव्य में समाज दर्शन का प्रवाह स्वाभाविक रूप से व्यक्तित्व विकास, पारिवारिक मूल्यों की रक्षा, और सामाजिक समृद्धि की प्रेरणा को श्रेष्ठता देता है? क्या यह व्यक्ति को सही और गलत के बीच व्यावहारिक निर्णय लेने में मदद और एक समृद्ध समाज की दिशा में मार्गदर्शन प्रदान करता है?

किसी भी देश के महान साहित्यकार और उनके साहित्य की सबसे बड़ी उपलब्धि उसके सामाजिक ताने-बाने को परखने और बुनने में होती है। समाज के भीतर सदियों से गहरी उथल-पुथल मचती रही है। तुलसी के समय के आसपास की बात करें तो तेरहवीं शताब्दी में हिंदू समाज में कुंठा और निराशा घर कर रही थी। चौदहवीं शताब्दी में धीरे-धीरे भक्तिवाद ने उसे कमजोरियों से उठाकर संभाला। सोलहवीं शताब्दी में वैष्णवता अपने चरम उत्कर्ष पर थी। उसके प्रभाव की चर्चा करते हुए डॉ. रामरतन भटनागर लिखते हैं- "सोलहवीं शताब्दी के मध्यकाल तक पहुँचते- पहुँचते हिंदू संस्कृति धर्म, नीति, स्मृति, साहित्य और राजनीति के क्षेत्रों में नए आदर्श पल्लवित करने में समर्थ हुई और इस प्रकार मध्ययुग में नवजागरण का सूत्रपात हुआ। वास्तव में चौदहवीं शताब्दी में ही भारतवर्ष में एक महान आध्यात्मिक तथा साहित्यिक क्रांति का बीजारोपण हो गया था।"2

'मानस' के कवि ने अपनी प्रखरता से मानव समाज की गहन व्याख्या की है।

तुलसी का युग मुगल सत्ता व सामंतवाद का युग था। डॉ. केदारनाथ द्विवेदी उस युग की वास्तविकता का चित्रण करते हैं- "उस समय का समाज आर्थिक दृष्टि से दो वर्गों में बंटा था, प्रथम वर्ग में सुल्तान विभिन्न सरदार, देशी नरेश और सामंत थे। दूसरे वर्ग में कृषक और सामान्य जन। दूसरे वर्ग के लोग किसी प्रकार विपन्नावस्था में जी रहे थे तथा शासक वर्ग विलासिता युक्त जीवन जी रहा था।"3 परिणामस्वरूप जनता दोहरी मार से परेशान थी। सामान्य जन पर एक तरफ मुगलों के अत्याचार और दमन का कहर बरस रहा था तो दूसरी तरफ देशी नरेशों और सामंतों के शोषण ने उनकी कमर तोड़ दी थी।
आक्रमणकारियों के लूट और शोषण की बढ़ती लिप्सा से समाज में नैतिकता कहीं दुबक कर बैठ गई थी। वेश्यावृत्ति, कामुकता, इंद्रिय सुख तथा व्यभिचार के कारण समाज में रूप और यौवन लिप्सा बढ़ने से समाज में अनाचार तीव्र गति से बढ़ने लगा। अवध बिहारी पांडे जी उस स्थिति से अवगत कराते हैं -"मुसलमानों के आगमन के बाद हिंदुओं को भिन्न प्रवृत्तियों के दुखद अनुभव भी हुए किंतु उसके मन में यह भाव नहीं आया कि उनके धार्मिक विश्वास भ्रामक अथवा इस्लाम एक श्रेष्ठ धर्म है।"4

तुलसी मानव जीवन की संपूर्णता में विश्वास करने वाले कवि थे। लोक धर्म से संपृक्त सामाजिक दर्शन प्रदान करने में ही उनकी महानता छिपी है। संपूर्ण समाज संकीर्णता तथा धर्मांधता का शिकार हो रहा था। परिस्थितिजन्य विवशता से सामाजिक जीवन में व्याप्त अमानवीय वृत्तियों की अनुगूंज 'मानस' के उत्तरकाण्ड में हिलोरें भरती हैं-

" सब नर कल्पित करहिं अचारा।
जाइ न बरनि अनीति अपारा।।"
"सौभागिनी विभूषण हीना।
बिधवन्ह के सिंगार नवीना।"5

तुलसी के समाज का यथार्थ जर्जर होती सामंती व्यवस्था है। अयोध्या कांड में वेदना का सागर सामंती समाज में मनुष्य की पीड़ा से उत्पन्न है। गृहस्थ की विषम स्थिति से कैसे भयंकर सामना होता है। राम का राज्याभिषेक वनवास में परिवर्तित हो जाता है, पिता दशरथ प्राण प्रिय बेटे के वियोग में स्वर्गवासी हो जाते हैं, माता कौशल्या की दशा पत्थर को भी पिघला देती है।उस समय लक्ष्मण, भरत और सीता की आत्मीयता उन्हें अकेले नहीं जाने देना चाहती।
सच तो यह है कि राम का स्वरूप वाल्मीकि, भवभूति, तुलसी व निराला आदि कवियों ने अपने युग के आदर्शों के आधार पर निर्मित किया है, कारण कवियों के युगबोध में भिन्नता है। समान है तो केवल राम का संघर्ष जो समाज कल्याण से जुड़ा है सीता का लंकापति द्वारा हरण किए जाने पर वह अपने पतिव्रत धर्म पर दृढ़ रहकर रावण को चेताती है-

" स्याम सरोज धाम सम सुंदर। प्रभु भज करिकर दसकंधर।।
सोभुज कंठ रक तव असि घोरा। सुनु सठ प्रवान पन मोरा ।"6

अधर्म, अत्याचार, पीड़ा, शोषण, दमन धार्मिक अनैतिकता व सामाजिक ढाॅंचे को तोड़ने वाली कुदृष्टि पर उनकी सूक्ष्म दृष्टि पड़ी। दरिद्रता और आत्मपीड़न के बीच समाज को संतुलित एवं मर्यादित बनाने के लिए तुलसी राम की तरफ हाथ बढ़ाते हैं-

"जब-जब होहिं धर्म की हानि। बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी।।

तब -तब धरी प्रभु मनुज सरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।।"7

सभी धर्मों में जितने भी अवतार हुए हैं वे तद्जन्य पीड़ा की पुकार से जन्में हैं। श्रीमद्भगवद् गीता में भी 'यदा यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।' के माध्यम से यही संकेत दिया गया है।धर्म व अनीति पर कुठाराघात होते देखकर वे सुखी समाज की कल्पना मात्र से सिहर उठते हैं। 'दोहावली' में तो राम उन राजाओं के पतन की घोषणा तक कर देते हैं जो बिना काम के राजा बने फिरते हैं। समाज में कुचाल चलते रहते हैं।

दूसरे राज्य में अकेली स्त्री के उत्कट आत्मविश्वास की सराहना कर तुलसीराम ने राम के चरित्र को निखार दिया है जो न केवल सीता के रक्षक हैं अपितु जाति- पाति आदि सभी बंधनों से ऊपर उठकर सब की सहायता के लिए तत्पर हैं। जब राम चित्रकूट पहु ंचते हैं तो आभीर, जवन, किरात, खस, स्वपच, शबरी व निषाद आदि का आतिथ्य स्वीकार कर ऊँच-नीच का भेद खत्म करते हैं-

"जाति पाति धनु धरमु बड़ाई। प्रिय परिवार सदन सुखदाई।।
* * *
सरगु नरकु अपबरगु समाना। जहँ तहँ देख धरें धनु बाना।।"8

तुलसीदास का सारा परिवर्तन समाज के परिष्कार के लिए था उन्होंने जिस समाज का सपना देखा, वह स्वयंसेवा और परमार्थ का था। राम का अयोध्या त्यागकर 14 वर्ष का वनवास स्वीकार करना, सीता को गंवाना, पुनः मिलन, राम- रावण नृशंस युद्धादि से ज्ञात होता है कि यह सब आकस्मिक था परंतु इसमें राम का अपना कोई स्वार्थ न था। अयोध्या के प्रति राम की आसक्ति देश-प्रेम से भी बढ़कर है-

"सुनु कपीस अंगद लंकेसा। पावन पुरी रुचिर यह देसा।।
जद्यपि सब बैकुंठ बखाना। बेद पुरान बिदित जगु जाना।।
अवधपुरी सम प्रिय नहीं सोऊ। यह प्रसंग जानइ कोउकोऊ।।
जन्मभूमि मम पुरी सुहावनि। उत्तर दिसि बह सरजू पावनि।।"9

यहा ं के बसने वाले सब बासी उन्हें अत्यंत प्रिय लगते हैं। उनका प्रेम पारिवारिक संबंधों से ऊपर उठकर सामाजिक संबंधों के धरातल पर आधारित दिखाई देता है। समूचा मानस इस चित्र की सत्यता प्रमाणित करता है।

तत्कालीन समाज की आर्थिक तथा राजनीतिक परिस्थितियों का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि हिंदू समाज पूरी तरह से छिन्न- भिन्न हो चुका था। तुलसी के समाज तंत्र को परिभाषित करते हुए रमेश कुंतल मेघ लिखते हैं- "जब वे समाज के पूरे रंगमंच को देखते-देखते तथा भोगते- भोगते यथार्थवादी व्यावहारिक हो भी जाते हैं (दोहावली, कवितावली, हनुमान बाहुकादि) तब वे कलिकाल की गर्दन मरोड़ देते हैं। अपने जीवन के परवर्ती चरण में तुलसी आध्यात्मिक और स्वप्नद्रष्टा के बजाय धार्मिक व यथार्थ द्दष्टा हुए हैं। उन्होंने अंततः घोषित किया कि सारे समाजतंत्र का आधार 'पेट' अर्थात् आर्थिक स्थिति है (कवितावली)।"10

तुलसीदास जी प्रताप भानु (राजस), रावण और बाली (तामस) , रामराज्य (सात्विक) के माध्यम से राज्यों की राजनीति की विविधता का चित्रण करते हैं। 'बरनि न जाई अनीति, घोर निसाचर जो करहि।'11 - में तुलसी अहंकारी रावण की कुनीति और अत्याचार दिखाकर उनकी निरंकुशता का परिचय देते हैं। राजा के साथ सचिव की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। वह तन - मन से राजा का सच्चा साथी और सहयोग होता है। सुमंत्र जैसे सुयोग्य मंत्री के होते राज्य हमेशा उन्नति करता है। रावण की सभा में सभी मंत्री जब उसके डर से अच्छी

राय देने में असहज महसूस करते हैं तो वे पासा पलट देते हैं और उसे कुमार्ग पर चलने का सुझाव दे बैठते हैं। किंतु न्याय का पालन करने वाला मंत्री राज्य के विनाश के भय से नीति युक्त बात करने में विनम्रता व बुद्धिमता से काम लेता है लेकिन जब रावण पर विभीषण के सुझाने- बुझाने का कोई असर नहीं होता तो उसका, उसके परिवार और यहाँ तक की राज्य का सर्वनाश तक हो जाता है। 'मानस' इस नरक के द्वार की पुष्टि करता है-

"सचिव बैद गुरु तीनि जो प्रिय बोलहिं भय आस।
राज धर्म तन तीनि कर होइ बेगहिं नाश।।"12

बल- वैभव के अहंकार के कारण रावण नैतिकता के प्रतिरूप राम से टकरा बैठता है, जिसका परिणाम जग जाहिर है। रावण वंश के अंत के बाद मंदोदरी विलाप करते हुए मन ही मन सोच रही है कि तुम्हारी असीम प्रभुता संसार भर में व्याप्त थी। दसों दिशाएँ तुम्हारे यहाँ नतमस्तक थी लेकिन न्यायप्रिय राम से विमुख होने पर तुम्हारे वंश में अब कोई शौक करने के लिए भी नहीं बचा। विधि का विधान कैसा विचित्र है? अहंकारी दशानन अब शक्तिहीन हैं और अब उनका बलशाली शरीर जंबुकों का भोजन बना हुआ है। उनका विरोध कर पाने के बीच क्षमता भी खत्म हो चुकी है।

तुलसी 'मानस' में सुमंत्र, विभीषण व प्रशस्त की सराहना कर राजा और मंत्री के स्वस्थ स्वरूप को उभरने का प्रयास करते हैं। राजा के अधीन अधिकारी, कर्मचारी, व्यापारी, सेना, मजदूर व किसान आदि प्रजा की स्थिति अलग-अलग रूप में देखने को मिलती है । राजधर्म का पतन होने से सद्गुण अलक्षित होने लगे थे। राजनीति के निकट जो प्रजा वर्ग आया वह सम्मानजनक जीवन व्यतीत कर रहा था परंतु सामान्य जनता अव्यवस्था के कारण शासकीय पीड़ा से कराह रही थी-

"कलि बारहिं बार अकाल परैं।
बिनु अन्न दुखी सब लोग मरैं।।" 13

तुलसी उस कलयुग का चरित्र देखते हैं। उस समय के नर- नारी समाज की दशा नट और मरकट के नाचने के समान थी। स्वेच्छाचारी पुरुष काम, क्रोध और लोभ से ग्रस्त था जो वेदों, संतो, देवताओं व ब्राह्मणों का विरोध कर रहा था। परपत्नी गमन और नारी के चरित्र को कलुषित करने जैसे घिनौने कर्मों की संख्या बढ़ती जा रही थी। नारियां भी परपुरुष की कामना करने लगी। जब सधवा आभूषणहीन और विधवाएँ नवीन श्रृंगार धारण करने वाली दिखें तो समझ लेना चाहिए कि पतन का कोई भी कोना छूटा नहीं है। नारी संयुक्त परिवार में रहकर सास- ससुर, ननद, पति, ज्येष्ठ व देवर आदि सभी की कृपा पात्र बनने की कोशिश में नाकामयाब ही रही। मां के स्वरूप की स्वस्थ गरिमा भी खत्म होने लगी थी-

"सुत मानहिं मातु-पिता तब लौं। अबलानन दिख नहीं जब लौं।।
ससुरारि पियारी लगी जब तें। रिपु रूप कुटुंब भये जब तें।।"14

आदर्शवादी तुलसी ने मानस के माध्यम से आदर्श समाज के रूप में पुत्रवत्सलता (दशरथ), ममतामय मातृत्व (कौशल्या), आज्ञाकारी पुत्र (राम), पतिव्रता पत्नी (सीता) व आदर्श सेवक(हनुमान) की कल्पना की।तुलसी ने ऐसी विलक्षण योजना अपनी युगीन पारिवारिक परिस्थितियों से खिन्न होकर की थी। समाज के सब लोग जब खुशियों में बराबर इकट्ठे होते हैं और एक दूसरे को बधाई देते हैं तो प्रसन्नता का कोई ठिकाना नहीं रह जाता। रघुबीर राम के विवाह के अवसर पर चारों दिशाओं में किस तरह का उत्साह भरा दिखता है-

"समाचार सब लोगन्ह पाए। लोग घर-घर होन बधाए।।
भुवन चारिदस भरा उछाहू। जनकसुता रघुबीर बिसाहू।।"15

'मानस' की यह मानवीय मांगलिकता सार्वभौमिक गुंजित होती है। अयोध्या की समस्त प्रकृति और सरलता का पुंज ही तो राम हैं। समाज में वर्ण व्यवस्था व्याप्त थी। राम राज्य वर्गहीन नहीं होने पर भी सरयू के राजघाट पर चारों वर्ण एक साथ स्नान करते नजर आते हैं। इस तरह की नैतिकता सामाजिकता से ही संभव है। कवि हृदय ने समाज के वास्तविक दृश्य का वर्णन करते हुए लिखा है-

"बरनाश्रम निज निज धर्म निरत वेद पंथ लोग।
चलति सदा पावहिं सुखहिं नहिं भय शोक न रोग।।"16

ऐसा समाज ही सब तरह के दुखों और क्लेशों से रहित हो सकता है। तुलसी ऐसे ही समाज का सपना देख रहे थे जिसको उन्होंने 'मानस' में साकार भी कर दिखाया । इस संदर्भ में उनकी वाणी युगतीत है। ऐसे व्यक्ति वंदनीय होते हैं जो अपने स्वार्थ के लिए दूसरों का अनहित नहीं करते अपितु अपने स्वभाव के मुताबिक परहित के लिए अपार द्वार खुले रखते हैं-

"बंदउं संत समान चित हित अनहित नहिं कोई।
अंजलि गत सुभ सुमन जिमि सम सुगंध कर दोहा।"17

ऐसे लोग समाज को कभी धोखा नहीं देते। वे भरोसे के लायक होते हैं तथा समाज के उन्नति में सहायक होते हैं। जिस समय का समाज पतनातीत हो, उस समय मनुष्यता और दिव्यता एक दूसरे की विरोधी दिखाई देती हैं। उनको एक करने की कल्पना ही नव्यता है, जिसे स्पष्ट करते हुए डॉ. रामरतन भटनागर लिखते हैं- "दिव्यता ही मनुष्य की प्रकृति है। ऋग्वेद के देवताओं में इस दिव्यता को आत्मिक शक्तियों के रूप में कल्पित कर उन्हें बाह्य प्रकृति के रूपों और उपकरणों पर आरोपित किया गया है परंतु बाद में इतिहास - युग में यह समझा गया कि दिव्यता ही परम मानवता है और परिपूर्ण मानव व्यक्तियों के रूप में राम और कृष्ण की कल्पना की गई।"18

जिस राम की कल्पना तुलसी ने की, वह लोक चेतना में पूर्णतः सम्मान के अधिकारी हैं। नैतिकता समाज का आधार है। असत्य, पाप, झूठ, अधर्म और भ्रष्टाचरण स्वस्थ समाज के लिए कोढ समान है। नैतिकता के क्षीण होने से मानवता मरने लगती है। रघुवंश नीति और मर्यादा का पालन करने वाला था। सत्य का सच्चा हिमायती था। पापों से कोसों दूर तथा वचनों का दृढ़ता से पालन करने वाला भी-

"रघुकूल रीत सदा चलि आई। प्राण जाए बरु बचन न जाई।।
नहिं असत्य सम पातक पुंजा। गिरि सम हो हिं कि कोटिक गुंजा।।
सत्यमूल सब सुकृत सुहाए। वेद पुरान बिदित मनु गाए।।"19

अपनी अन्य रचनाओं में भी उन्होंने समाजदर्शन को सजीव किया है, जैसे 'विनयपत्रिका', 'कवितावली', और 'कृतिनामा आदि'। इन ग्रंथों में भी सामाजिक न्याय, धर्म, और प्रेम के महत्वपूर्ण सिद्धांत उजागर किए गए हैं। उनकी कविताएं और प्रसिद्ध दोहे भी समाज में नैतिक और आध्यात्मिक संदेश को सार्थक रूप से पहुंचाते हैं। इन रचनाओं में भी वे अपने समाज के प्रति अपना समर्पण प्रकट करते हैं, जिससे उनकी कल्पना का अद्वितीय सांस्कृतिक योगदान है। उत्तरकांड में तुलसी राम की दयालुता, भक्त वत्सलता के साथ-साथ अपनी दीनता व

व्याकुलता का हृदय विदारक चित्रण प्रस्तुत करते हैं। 'विनयपत्रिका' में भगवान राम से अपनी दशा का आत्म निवेदन करते हैं। कलयुग में कलि की करालता से उत्पन्न भयावहता का जो चित्रण किया उसमें समस्त लोक समाहित है। 'मानस' में तुलसी की दिव्य दृष्टि दिखाई देती है। इसकी प्रस्तावना अद्वितीय है, ऐसी किसी ग्रंथ की नहीं है। मानस में एक भरा- पूरा समाज दिखाई देता है। बालकांड का आनंदोत्सव प्रकाश की तरह जगमगाता है। अरण्य, किष्किंधा और सुंदरकांड में कर्म और उद्योग का उज्जवल पक्ष चित्रित है। लंका और उत्तरकांड में कर्म की चरम सीमा दर्शनीय है, विजय और विभूति का ऐसा चित्र कवि ने खींचा है जो वास्तव में बेजोड़ है। समूचे जीवन संघर्ष की गाथा है 'मानस'। तुलसी अवसरानुसार दुख- सुख आदि की अभिव्यंजना करने के साथ-साथ सभी वर्णों के लोगों को आदर का अधिकारी मानते हैं। उन्होंने एक चिकित्सक की बातें समाज के नब्ज को देखा और परखा है।
तुलसी दास के 'रामचरितमानस' के समाजदर्शन का निष्कर्ष सामाजिक, आध्यात्मिक और मानवीय मूल्यों की महत्वपूर्ण भूमिका को उजागर करता है। उनकी रचनाओं में सामाजिक न्याय, समानता, प्रेम और धर्म के महत्वपूर्ण सिद्धांत प्रकट होते हैं। उन्होंने धर्म के माध्यम से मानवीय अध्यात्म की ऊँचाईयों तक पहु्ंचने का मार्ग प्रशस्त किया। डॉ. भटनागर के शब्दों में, "तुलसी की मन: चेतना वर्तमान क्षण में ही अतीत छण तथा भविष्यत् क्षण को सार्थक कर लेती है। यही तुलसी का साक्षात्कार है।….. यही उनकी वैष्णवता बन जाती है और भक्ति राष्ट्र धर्म के रूप में संपन्न सांस्कृतिक योजना का कर्म धारण कर लेती है। राम के व्यक्तित्व में तुलसी ने सौंदर्यशील और शौर्य की पराकाष्ठा कल्पित की है। सौंदर्य उनकी भक्ति भावना की मा्ंग है, शील उनकी नैतिक धारणा और तत्संबंधी आकांक्षा की पुकार है, शक्ति स्वदेश और स्वराज के लिए आशा और कर्मठता की पुकार है। स्वभाव, स्वधर्म और स्वदेश के प्रति तुलसी की जागरूकता और ईमानदारी राम के व्यक्तित्व के इन तीन स्तरों में मिलेगी।"20 उनका समाजदर्शन स्वतंत्रता, भाईचारा, और धार्मिक एकता को स्थापित करने का प्रयास करता है। 'रामचरितमानस' सामाजिक सद्भावना और मानवीय सम्मान की अद्वितीय क्रांति का प्रेरणास्त्रोत है।

समाज और साहित्य की अपनी कोई न कोई भाषा होती है। मानस लोक हित का साहित्य बना क्योंकि इसके पीछे जनभाषा की शक्ति काम कर रही थी। तुलसी ने अवधि को बड़े आदरपूर्वक ग्रहण करके इसे युग की काव्य भाषा का बना दिया। मध्य युग में अवधि और ब्रज दो प्रतिनिधि भाषाओं ने संस्कृति की जड़ों को जमाने में अहम भूमिका निभाई जिसमें रामचरितमानस का महत्वपूर्ण स्थान है। समाज की समस्याओं के भीतर उठने वाले प्रश्नों को उन्होंने अनुत्तरित नहीं छोड़ा बल्कि शिव, सौंदर्य और शील के आधार पर नए समाधान भी प्रस्तुत किए।

'मानस' यद्यपि तुलसी की शुरुआती रचना है लेकिन कोई भी रचना अपने समाज से मुख नहीं मोड़ सकती। एक जागरूक कवि वही लिखता है जो वह समाज में देख रहा होता है। मानस नवीन जीवन दृष्टि के माध्यम से व्यक्ति, समाज और देश के लिए अमर संदेश प्रदान करता है। 'सिया राममय सब जग जानी'- का आधार प्राप्त करके यह रचना स्वान्त: सुखाय की बजाय जनहिताय बन गई। उनकी मानवीय सहानुभूति का आधार सामाजिक यथार्थ है। आज भी आदर्श समाज व्यवस्था के लिए रामराज्य का उदाहरण दिया जाता है। तुलसी के मानस के माध्यम से समाज दर्शन व्यक्ति को आत्म-निर्भरता और दयालु भावनाओं का ज्ञान प्रदान करता है। यह काव्य भारतीय समाज में सामाजिक न्याय और प्रेम के महत्व को सिखाता है। इसमें व्यक्ति को सामाजिक जिम्मेदारियों का एहसास दिलाया जाता है और व्यावहारिक उपायों की दिशा में मार्गदर्शन प्रदान किया जाता है|तुलसी दास के 'रामचरितमानस' के समाजदर्शन का निष्कर्ष सामाजिक, आध्यात्मिक और मानवीय मूल्यों की महत्वपूर्ण भूमिका को उजागर करता है। उनकी रचनाओं में सामाजिक न्याय, समानता, प्रेम और धर्म के महत्वपूर्ण सिद्धांत प्रकट होते हैं। उन्होंने धर्म के माध्यम से मानवीय अद्यात्म की ऊंचाईयों

तक पहुंचने का मार्ग प्रशस्त किया। उनका समाजदर्शन स्वतंत्रता, भाईचारा, और धार्मिक एकता को स्थापित करने का प्रयास करता है। 'रामचरितमानस' सामाजिक सद्भावना और मानवीय सम्मान की अद्वितीय क्रांति का प्रेरणास्त्रोत है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1.डॉ. सीताराम झा ‘श्याम, भारतीय समाज का स्वरूप, पृ.76,
2. डॉ. रामरतन भटनागर, मध्ययुगीन वैष्णव संस्कृति और तुलसीदास, पृ. 4
3. डॉ. केदारनाथ द्विवेदी, कबीर और कबीर पंथ, पृ.148
4. अवध बिहारी पाण्डेय, मध्यकालीन शासन और समाज, पृ.171
5. मानस, उत्तरका० 5/ 99 (क)
6. मानस,सुंदरका० 9 / 3,4, पृ. 473-74
7. रामचरितमानस, बाल०121/6
8. रामचरितमानस, अयोध्याका० 131, 5,6,7
9. मानस, उत्तरका० 3/1-7, पृ. 595
10. रमेश कुंतल मेघ, तुलसी : आधुनिक वातायन से, पृ. सं. 116
11.रामचरितमानस, बालकां०183/12
12. मानस, सुंदरका० 37
13. रामचरितमानस, उ० 101 (क) 10
14. रामचरितमानस, उ०101(क) 4-5
15. मानस,बाल० 295/ 2, 3, पृ. 195
16. मानस, उ०का०, दोहा 20, पृ. 607
17. मानस, बाल० 3 क, पृ. 36
18. डॉ. रामरतन भटनागर, तुलसी० नवमूल्यांकन, पृ. 53
19. मानस, अयो० 27/ 4- 6, पृ. 251
20. डॉ रामरतन भटनागर, मध्ययुगीन वैष्णव संस्कृति और तुलसीदास, पृ.152

-प्रो. सुकर्मवती देवी
हिंदी-विभाग
इंस्टिट्यूट ऑफ इंटीग्रेटिड एंड ऑनर्स स्टडीज
कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र
sukarmwati.iihs@kuk.ac.in